[F)

# मंच प्रदर्शन की परम्परा

**रूकैय्या**
*संगीत विभाग*
*रघुनाथ कन्या महाविद्यालय, मेरठ*
*Email: rukaiyarashid379@gmail.com*

Reference to this paper should be made as follows:

**रूकैय्या,**

*मंच प्रदर्शन की परम्परा*

Artistic Narration
Dec. 2019, Vol. X No. 2,
pp.139-142

https://anubooks.com/
?page_id=6393

***सारांश***

*संगीत में मंच प्रदर्शन एक अनिवार्य अंग है। यह साधक को आनन्द से परमानन्द तथा परमेश्वर का सान्निध्य तो देता है पर मानव मात्र के मन को परिष्कृत करता हुआ अत्यन्त सुख देता है। मंच प्रदर्शन में श्रोताओं का होना अति आवश्यक है। जहाँ भी कलाकार या मानव गान करता है तथा श्रोता विद्यमान है वहाँ मंच प्रदर्शन सम्पन्न हो जाता है। 'मंच प्रदर्शन' शब्द भले ही नया हो पर इसका प्रादुर्भाव वैदिक काल से माना जा सकता है मंच प्रदर्शन छोटे से छोटा या वृहत्तरूप में हो सकता है जहाँ गायक तथा श्रोता भी उपस्थित हो वही मंच प्रदर्शन की अवधारणा संघटित हो जाती है इस प्रकार एक माँ अपने शिशु को सुलाने के लिए जो लोरी गाती है उसमें भी मंच प्रदर्शन का बीज रूप में निहित है।*

*गायन, वादन, नृत्य तथा नाटक का माध्यम मंच प्रदर्शन है। कलाकार की भूमिका मंच प्रदर्शन को सफल बनाने तथा अपने व्यक्तित्व एवं कुशल प्रस्तुतिकरण द्वारा श्रोताओं के हृदय से सम्बन्ध स्थापित करने की है। उसी प्रकार श्रोताओं की भूमिका कलाकार के कला कौशल भावपूर्णता आदि को परखना तथा शांत चित्त होकर उक्त प्रस्तुतिकरण का रसास्वादन कलाकार को प्रोत्साहित करना और उसकी उत्कृष्टतम कला का प्रदर्शन करवाना है।*

(SJI

**प्रस्तावना**

संगीत एक ऐसी कला है जिसके द्वारा मन के भावों को प्रदर्शन द्वारा प्रकट किया जा सकता है। संगीत मनोरंजन का साधन होने के साथ–साथ मानव के मन तथा मस्तिष्क को असाधारण ऊँचे स्तर पर ले जाने की क्षमता रखता है यह अमूल्य औषधि है। जो मानव चित्त को शान्ति एवं सन्तुष्टि प्रदान करती है। संगीत अन्तरात्मा की बाध्य अभिव्यक्ति है मन में सुप्त भावनाओं का साकार रूप ही संगीत है। संगीत को आत्मा का संतोष प्रदान करने वाला भोजन कहा गया है। संगीत सारे विश्व में प्रचलित है तथा इसे विश्व की भाषा भी कहा गया है।

किसी भी कला अथवा विशिष्ट विचारों की प्रस्तुति के लिए कलाकार जिस विशिष्ट स्थान पर विराजमान होते है उसे 'मंच' कहा जाता है। रंजकता इसका प्रमुख विषय होने के कारण इसी को 'रंगमंच' भी कहते है। पाश्चात्य देशों व अंग्रेजी भाषा में इसको 'स्टेज' कहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि मानव के उद्भव से पूर्व भी रंगमंच देवी–देवताओं में प्रचलित था। जैसे भगवान शिव का कैलाश पर्वत माता वागीश्वरी का हस्त में वीणा लेकर मयूर पर बैठना तथा भगवान इन्द्र के दरबार में, गन्धर्व, किन्नर एवं अप्सराओं का नृत्य आदि मंच के अस्तित्व की ओर ही संकेत करते हैं। सर्वप्रथम संस्कृत साहित्य के सुप्रसिद्ध ग्रंथ नाट्यशास्त्र में 'रंगमंच' का उल्लेख मिलता है।

संगीत में मंच प्रदर्शन एक अनिवार्य अंग है मंच प्रदर्शन द्वारा ही कलाकार अपनी कला को श्रोताओं अथवा रसिको के सम्मुख प्रस्तुत करता है। मंच कलाकार और श्रोता के मध्य प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करने का सशक्त माध्यम है। मंच जिसे शास्त्र में 'रंग' कहा गया है श्रोता और कलाकार के बीच ऐसा पुल है जो दोनों को आपस में मिलता है।

आज के वैज्ञानिक युग में जनता तक संगीत पहुँचाने के कई साधन है यथा– आकाशवाणी, दूरदर्शन, टेपरिकार्डर तथा मंच प्रदर्शन आदि। इनमें से मंच प्रदर्शन सबसे महत्वपूर्ण है। क्योंकि इससे श्रोता कलाकार को प्रत्यक्ष रूप से सुन सकते हैं। मंच के द्वारा कला की अभिव्यक्ति के लिए कलाकार में आत्मविश्वास होना अनिवार्य है।

मंच को सुचारू, प्रभावशाली व सक्रिय बनाने के लिए बहुत से व्यक्तियों के सहयोग की आवश्यकता होती है जैसे– प्रबन्धक, कोषाध्यक्ष, कलाकार तथा श्रोतागण।

कलाकार, श्रोतागण तथा कोषाध्यक्ष इन तीनों का संगम बनाए रखना प्रबन्धक का कार्य होता है। प्रबन्धक का मुख्य कार्य उपयुक्त कलाकार का चयन करना है तथा कलाकार पूर्णतः निपुण है या नहीं यह जाँचना है कलाकार के प्रति लोगों की प्रतिक्रिया का अनुमान लगाना और तत्पश्चात् प्रबन्धक को उचित स्थान एवं वातावरण का चयन करना चाहिए। सभागृह को इस प्रकार सुसज्जित किया जाना चाहिए जिससे कलाकार तथा श्रोता दोनों को प्रसन्न रखा जा सके। सभागृह कार्यक्रमों में मंच की ऊँचाई भारतीय बैठक के अनुसार आधे से पौने मीटर तक ऊँची होनी चाहिए तथा इतना स्थान रखना चाहिए जिसमें संगतकार अपने वाद्यों के साथ बैठ सके।

मंच प्रदर्शन में कलाकार की भूमिका सर्वथा प्रमुख होती है। आत्मविश्वास के साथ अपनी कला का प्रदर्शन करते हुए श्रोताओं को आनन्दित करना कलाकार का प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए। संगीत के माध्यम से संगीतज्ञ ईश्वर की उपासना करता है इसके अतिरिक्त कलाकार का मंच पर उठना–बैठना,

[F)

बातचीत करना, वेशभूषा तथा कला प्रदर्शन के समय कृत्रिमता और आडम्बर से रहित आदि गुण उसके व्यक्तित्व के परिचायक होते है।

आधुनिक युग में जनता उसी कलाकार को पसन्द करती है जो उन्हें कम से कम समय में अधिक से अधिक आनन्द प्रदान करा सके। मानव जीवन अत्याधिक व्यस्त होने के कारण किसी के पास इतना समय नहीं है कि वह देर रात तक बैठकर संगीत सभाओं का आयोजन करेगा। अतः कलाकार को समय की मर्यादा का पालन तथा श्रोताओं की इच्छा एवं श्रवण क्षमता को ध्यान में रखते हुए अपनी कला का प्रदर्शन करना चाहिए। संगीत के आयोजनों की सफलता कलाकार एवं संगत कलाकार के आपसी सहयोग पर निर्भर करती है संगत करने का लक्ष्य ही यही होता है कि कला का सौन्दर्य बढ़े और कलाकार अपनी कला में नवीन चमत्कार दिखा सके। मंच प्रदर्शन के समय कलाकार के लिए सबसे अधिक ध्यान रखने योग्य बात है कि वह मंच पर बैठकर कोई ऐसी क्रिया न करें जिससे ऐसा प्रतीत हो कि उसमें डर, भय, घबराहट या शंका है। मंच पर उसे आत्मविश्वास से अपनी कला का प्रदर्शन करना चाहिए।

संगीत कार्यक्रमों की अन्तिम श्रृंखला में श्रोतागण की भूमिका आती है। भरत ने नाट्यशास्त्र में श्रोताओं के गुणों का वर्णन किया हैं। प्रत्येक प्रत्यक्ष कला में कलाकार का उद्देश्य श्रोता या दर्शक के सम्मुख अपनी कला का प्रदर्शन कर, उनके हृदय में सुप्त (सोये हुए) कोमल भावनाओं को जागृत करना होता है क्योंकि कलाकार का प्रमुख सम्बन्ध जन साधारण श्रोता के हृदय तक पहुँचना होता है। श्रोता अर्थात् 'श्र' यानी सुनने वाला। श्रोता का कार्य ही कलाकृति का अस्वादन करना है संगीत के मंच प्रदर्शन के लिए श्रोता एक प्रमुख अंग है। श्रोता का मनोरंजन करने के लिए ही मंच प्रदर्शन किया जाता है। सांगीतिक कार्यक्रमों का श्रवण करने वाले श्रोताओं को दो भागों में विभाजित किया जाता है। शास्त्रीय संगीत से परिचित तथा शास्त्रीय संगीत से अपरिचित। परिचित श्रोताओं को पुनः तीन उपविभागों में बाँट सकते हैं संगीतज्ञ, पारखी, विद्यार्थी। संगीतज्ञ श्रेणी में उन व्यक्तियों को रखा जा सकता है जो शास्त्रीय संगीत के ज्ञाता ही नहीं वरन् संगीत कला के तीनों पक्षों अर्थात् गायन, वादन एवं नृत्य में से किसी एक पक्ष के अतिरिक्त सैद्धान्तिक एवं क्रियात्मक दोनों पक्षों में भी विशेष रूप से जानकारी रखते है। पारखी वर्ग में ऐसे व्यक्तियों को रखा जा सकता है जिन्हें संगीत का प्रौढ़ ज्ञान तो है किन्तु दुर्भाग्यवश अनुकूल परिस्थिति न मिलने से अथवा किसी विशेष कारण से क्रियात्मक प्रदर्शन में सफल नहीं हो पाए। श्रोताओं की तीसरी श्रेणी में विद्यार्थी वर्ग आता है जो किसी संगीत विद्यालय अथवा संगीतज्ञ से शिक्षा ग्रहण कर रहा होता है। अतः यह वर्ग किसी भी कार्यक्रमों को ज्ञानोपार्जन की दृष्टि से सुनता है।

वर्तमान समय में विज्ञान के चमत्कारिक अविष्कारों ने संगीत के कार्यक्रमों का रूप ही परिवर्तित कर दिया है। विभिन्न कलाओं की शिक्षा प्राप्त करने के लिए अब अनेक साधन उपलब्ध हो गए हैं। श्रेष्ठ कलाकारों को आकाशवाणी, दूरदर्शन व टेपरिकार्डर के माध्यम से व्यक्ति घर बैठकर ही सुन सकता है। संगीत संस्थाओं, विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में प्रति वर्ष विद्यार्थी संगीत की शिक्षा ग्रहण करके परीक्षाओं में बैठते है जिसके कारण संगीत के आयोजनों का भी रूप बदल गया है। परन्तु मंच के आभाव में कोई कलाकार अपने आपको कलाकार साबित करने में सक्षम नहीं है।

सही मायने में मंच ही कलाकार को उसकी कला का सही मूल्य और कलाकार को प्रतिष्ठा एवं पहचान देता है। मंच प्रदर्शन द्वारा कलाकार में व्यैक्तिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक स्तर को उन्नत बनाने

(SJI

की क्षमता होनी चाहिए। कलाकार की यह सर्वप्रथम तथा मुख्य भूमिका है। अतः संगीत अथवा किसी भी कला के साथ जुड़े हुए कलाकारों का यह कर्त्तव्य बनता है कि वह मंच प्रदर्शन के कार्यक्रमों अथवा मंच प्रदर्शन की परम्परा के विकास के लिए यथा सम्भव प्रयास करें।

**सन्दर्भ ग्रन्थ**

1. *संगीत रत्नावली* – अशोक कुमार 'यमन', संस्करण– 2008, पृ0सं0 **691, 692**
2. *संगीत विशारद* – वसंत, 30वाँ संस्करण, अक्टूबर 2017, पृ0सं0 **715**
3. *मंच प्रदर्शन में कलाकार एवं श्रोता* – हरीश कुमार तिवारी, संस्करण– 2005, पृ0सं0 **3, 7, 9, 99, 108**
4. *संगीत मधुबन* – मधु बाला सक्सेना, राकेशबाला सक्सेना, संस्करण– 2001, पृ0सं0 **208, 210**